United International Journal of Multidisciplinary Research
ISSN: 3048-6726 (UIJMR) Impact Factor: 6.934 (SJIF)
An International Peer-Reviewed and Refereed Multidisciplinary Journal
www.uijmr.in Vol-3, Special Issue-II ,2026

भारतीय ज्ञान परंपरा के परिप्रेक्ष्य में डॉ. देवराज के उपन्यासों में स्त्री-पुरुष संबंध

[1]उषा लावण्या पिनिसेट्टी
शोधार्थी , पिठापुर राजा शासकीय महाविद्यालय
[2]डॉ हरिराम प्रसाद पसुपुलेटी
शोधनिर्देशक एवं विभागाध्यक्ष ,पिठापुर शासकीय महाविद्यालय,आदिकवि नन्नया विश्वविद्यालय से संबद्द , काकिनाडा,राजमाहेंद्रवाराम

स्वतंत्रोत्तर हिंदी उपन्यास केवल सामाजिक परिवर्तन का दर्पण नहीं है, बल्कि वह आधुनिक मानव का मानसिक, नैतिक और दार्शनिक जटिलताओं का गहन अन्वेषण भी करता है। इस संदर्भ में डॉ. देवराज (1917–1999) का स्थान विशिष्ट है। उन्होंने अपने उपन्यासों के माध्यम से स्त्री-पुरुष संबंधों को न तो केवल सामाजिक मर्यादाओं के ढाँचे में बाँधा और न ही उन्हें मात्र मनोवैज्ञानिक समस्या बनाकर प्रस्तुत किया, बल्कि भारतीय ज्ञान परंपरा के आलोक में उनका विश्लेषण किया है।

डॉ. देवराज के उपन्यासों में पाश्चात्य मनोविश्लेषण, विशेषतः फ्रायड की अवधारणाओं का प्रभाव दिखाई देता है, परंतु यह प्रभाव भारतीय दर्शन से टकराकर संतुलित हो जाता है। वेदांत, उपनिषद्, भगवद्गीता, योगदर्शन और नीति-साहित्य उनके उपन्यासों की वैचारिक पृष्ठभूमि का निर्माण करते हैं। भारतीय परंपरा में काम को चतुर्विदा पुरुषार्थों में एक आवश्यक अंग माना गया है, किंतु वह धर्म, अर्थ और मोक्ष से पृथक नहीं हो सकता। डॉ. देवराज के उपन्यासों के स्त्री-पुरुष संबंध इसी संतुलन के विघटन और पुनर्स्थापन पर बल देती हैं|

भारतीय ज्ञान परंपरा में स्त्री-पुरुष संबंधों की अवधारणा

भारतीय दार्शनिक परंपरा में स्त्री-पुरुष संबंध केवल जैविक या सामाजिक संबंध नहीं हैं, बल्कि आध्यात्मिक यात्रा के सहचर माने गए हैं। उपनिषदों में आत्मा की खोज, गीता में निष्काम कर्म और योगदर्शन में इंद्रिय-निग्रह—ये सभी मनुष्य के संबंधों को संयम और विवेक से जोड़ते हैं।

काम को भारतीय परंपरा में पाप नहीं कहा गया, किंतु उसे धर्माधीन माना गया है। यों मनुस्मृति का "कामो धर्मेण संयुक्तः" सिद्धांत स्पष्ट करता है कि वासना तभी सार्थक है जब वह नैतिक मर्यादाओं से बंधी हो। इसी प्रकार गीता इंद्रियों को मन का शत्रु मानते हुए आत्मसंयम पर बल देती है। यह दार्शनिक पृष्ठभूमि डॉ. देवराज के उपन्यासों में निरंतर प्रतिध्वनित होती है।

डॉ. देवराज के उपन्यासों की विशेषता यह है कि वे न तो वासना का खुला महिमामंडन करते हैं और न ही कठोर नैतिकता का उपदेश देते हैं। उनके पात्र आधुनिक शिक्षित वर्ग से आते हैं, जो परंपरा और आधुनिकता के द्वंद्व में फँसे हुए हैं।
फ्रायड के मनोविश्लेषण की तरह वे अवचेतन की गहराइयों में उतरते हैं, किंतु भारतीय दर्शन की तरह आत्मसंयम और संतुलन को समाधान के रूप में प्रस्तुत करते हैं। उनके नायक-नायिकाएँ इच्छाओं से मुक्त नहीं हैं, परंतु उन इच्छाओं से जूझते ही दिखाई देता हैं। यही संघर्ष उनके उपन्यासों को दार्शनिक गहराई प्रदान करता है।

'पथ की खोज' : वासना और आत्मसंयम का द्वंद्व

डॉ. देवराज का उपन्यास *पथ की खोज* स्त्री-पुरुष संबंधों की दार्शनिक विवेचना का प्रारंभिक और सशक्त उदाहरण है। इसका नायक चंद्रनाथ आदर्शवादी होते हुए भी मानसिक असंतोष से ग्रस्त है। उसकी पत्नी सुशीला पारंपरिक रूप से आदर्श नारी है, किंतु बौद्धिक स्तर पर चंद्रनाथ को संतुष्ट नहीं कर पाती। साधना के प्रति चंद्रनाथ का आकर्षण शारीरिक वासना तक सीमित नहीं है, बल्कि वह एक बौद्धिक और आत्मिक आकांक्षा का रूप ले लेता है। किंतु यही आकांक्षा अंततः संयम के प्रश्न से टकराती है। साधना का संयम भारतीय ज्ञान परंपरा के आत्म-संयम और श्रेय-मार्ग का प्रतीक बन जाता है।

यह उपन्यास गीता के उस सिद्धांत से जुड़ता है, जहाँ इंद्रिय-निग्रह को ज्ञान और आत्मबोध का अनिवार्य साधन माना गया है। चंद्रनाथ का संघर्ष यह स्पष्ट करता है कि इच्छाओं का दमन नहीं, बल्कि उनका विवेकपूर्ण नियंत्रण ही भारतीय दर्शन का लक्ष्य है।

'अजय की डायरी' : आधुनिक मनुष्य की अतृप्ति

अजय की डायरी डॉ. देवराज का सर्वाधिक मनोवैज्ञानिक उपन्यास माना जाता है। यहाँ स्त्री-पुरुष संबंध केवल नैतिक प्रश्न नहीं, बल्कि मानसिक असंतुलन का परिणाम बन जाते हैं। अजय अपनी पत्नी शीला से ऊबकर हेमा की ओर आकर्षित होता है और 'मन और शरीर की पृथकता' का तर्क देकर अपने संबंधों को न्यायोचित ठहराने का प्रयास करता है।
यह स्थिति भारतीय दर्शन के पुरुषार्थ-संतुलन के विघटन को दर्शाती है। काम यहाँ धर्म और मोक्ष से कट जाता है, परिणामस्वरूप अजय कुंठा, ग्लानि और असंतोष से घिर जाता है। योगदर्शन के अनुसार यह स्थिति अविद्या और अस्मिता जैसे क्लेशों से जुड़ी है।
डायरी-लेखन के माध्यम से आत्म-विश्लेषण तो होता है, किंतु आत्मबोध नहीं। गीता के समत्वयोग का अभाव अजय को संतुलन से दूर ले जाता है। डॉ. देवराज इस उपन्यास में आधुनिक व्यक्ति की उस मानसिक स्थिति को उजागर करते हैं, जहाँ आत्मचिंतन तो है, पर आत्मसंयम नहीं।

'दूसरा सूत्र' : स्वतंत्रता और संस्कार का संघर्ष

दूसरा सूत्र उपन्यास में स्त्री-पुरुष संबंधों को सामाजिक संरचना के संदर्भ में देखा जा सकता है। इसका नायक 'आनंद मोहन' विवाह को सामाजिक जकड़न मानता है और विवाहेतर संबंधों में व्यक्तिगत स्वतंत्रता खोजता है। यों यह प्रश्न उठाता है कि क्या स्वतंत्रता का अर्थ सामाजिक दायित्वों से पलायन है? भारतीय परंपरा में स्वतंत्रता को स्वेच्छाचार नहीं, बल्कि आत्म-नियंत्रण से जोड़ा गया है। गीता कर्मयोग पर बल देती है, जबकि आनंद मोहन कर्तव्य से विमुख दिखाई देता है। चाणक्य नीति का इंद्रिय-जय सिद्धांत यहाँ अत्यंत प्रासंगिक हो उठता है। आनंद मोहन का अकेलापन यह दर्शाता है कि इंद्रिय-नियंत्रण के बिना संबंध केवल क्षणिक सुख प्रदान करते हैं, स्थायी संतोष नहीं।

डॉ. देवराज के उपन्यासों में स्त्री पात्र

डॉ. देवराज के उपन्यासों की स्त्रियाँ पारंपरिक अर्थों में न तो पूर्णतः आदर्श हैं और न ही केवल भोग की वस्तु। वे पुरुष पात्रों के आत्मसंघर्ष का दर्पण बनती हैं। 'साधना' का संयम, 'शीला' की पीड़ा, 'हेमा' की आकांक्षा और 'प्रतिभा' की स्वतंत्रता—ये सभी स्त्री-पात्र पुरुषों के भीतर छिपे द्वंद्व को उजागर करते हैं।

निष्कर्ष

इसी दृष्टि से डॉ. देवराज स्त्री को नैतिक पतन का कारण नहीं, बल्कि आत्मबोध की कसौटी के रूप में प्रस्तुत करते हैं। इतना ही नहीं डॉ. देवराज का सबसे बड़ा योगदान यह है कि उन्होंने फ्रायडियन मनोविश्लेषण को भारतीय दर्शन के साथ समन्वित किया। जहाँ फ्रायड वासना को मूल प्रेरक शक्ति मानते हैं, वहीं भारतीय दर्शन उसे नियंत्रित और उदात्त करने की बात करता है। डॉ. देवराज के उपन्यासों में यही द्वंद्व दिखाई देता है—वासना का स्वीकार और उसका संयम। यह संयोजन हिंदी उपन्यास को वैचारिक ऊँचाई प्रदान करता है।

निष्कर्षतः

कहा जा सकता है कि डॉ. देवराज के उपन्यास स्त्री-पुरुष संबंधों को केवल सामाजिक या नैतिक समस्या के रूप में नहीं, बल्कि दार्शनिक और मानसिक संघर्ष के रूप में प्रस्तुत करते हैं। भारतीय ज्ञान परंपरा—गीता का समत्वयोग, योगसूत्र का क्लेश-निरोध, उपनिषदों का आत्म-चिंतन और नीति-साहित्य का इंद्रिय-नियंत्रण—उनकी रचनाओं को गहन अर्थ प्रदान करता है। काम यहाँ स्वाभाविक है, किंतु धर्म और संयम से नियंत्रित है। आपके नायक इन आदर्शों की ओर बढ़ने का प्रयास करते हैं, परंतु अक्सर भटक जाते हैं। यही भटकन आधुनिक मनुष्य की सच्ची पहचान बन जाती है। इस प्रकार डॉ. देवराज हिंदी साहित्य में पाश्चात्य मनोविश्लेषण और भारतीय दर्शन के संतुलित समन्वय के प्रतिनिधि उपन्यासकार सिद्ध होते हैं।

संदर्भ सूची:

पथ की खोज, (1951), डॉ देवराज ,बुद्दिवादी प्रकाशन गृह ,यूपी.
अजय की डायरी. (1960), डॉ देवराज ,राजकमल प्रकाशन, दिल्ली.
दूसरा सूत्र. (1978), देवराज, डॉ,राजकमल एंड संस,दिल्ली.
भगवद्गीता. (अध्याय 2, श्लोक 48; अध्याय 3, श्लोक 41),गीता प्रेस,गोरखपुर.
पतंजलि. योगसूत्र (क्लेश सिद्धांत), चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन,वाराणसी
कठोपनिषद् ('श्रेयः कामः वा' द्वंद्व), गीता प्रेस,गोरखपुर
मनुस्मृति (काम-धर्म संबंध), प्रभात प्रकाशन**,** दिल्ली.